**ओ३म्**

**‘यज्ञ व संस्कार कराने वाले पुरोहित तथा उसकी दक्षिणा’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

 पुरोहित उस व्यक्ति को कहते हैं जो देश व समाज के प्रत्येक व्यक्ति के हित की भावना से कार्य करता हे। इसके लिए पुरोहित को अपने उद्देश्य का पता होना चाहिये और उसके साधनों का ज्ञान भी होना चाहिये। वह विद्वान एवं पुरुषार्थी होना चाहिये और चारित्रिक बल का धनी हो। विद्वान शब्द का अर्थ ही हम यह समझते हैं कि वह वेदों की शिक्षाओं व ज्ञान से पूरी तरह से परिचित हो व उसका दैनिक स्वाध्याय करता हो। इस श्रेणी में हमारे सारे ऋषि, सामाजिक जीवन व्यतीत करने वाले सच्चे योगी, सभी त्यागी व निर्लोभी सामाजिक नेता और घरों में वेदानुसार संस्कार और यज्ञ अग्निहोत्र वा पूजा पाठ कराने वाले पण्डित व पुरोहित भी आते हैं। ऋग्वेद का पहला मन्त्र **‘अग्नि मीळे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम्। होतारं रत्नधातमम्।।’** है। इस मन्त्र में ईश्वर को सभी जीवों का पूर्ण हित करने के कारण पुरोहित कहा गया है। अतः पुरोहित वह व्यक्ति होता है जो भावनात्मक व अपने कामों से लोभ रहित होकर दूसरों का हित करता है।

 आजकल पुरोहित शब्द घरों व परिवारों में संस्कार, पूजा पाठ व अनेक अवसरों पर यज्ञ अग्निहोत्र कराने वाले विज्ञ व्यक्तियों पर प्रयोग में लाया जाता हैं। पुरोहित ही यज्ञ का ब्रह्मा भी कहा जाता है। जब किसी को संस्कार आदि कराना होता होता है तो वह आर्यसमाज के पुरोहित को अपने निवास व संस्कार आदि के स्थान पर आमंत्रित करते है। पुरोहित जी उन्हें आवश्यकतानुसार यज्ञ कुण्ड, समिधायें, घृत, हवन सामग्री, यज्ञ के पात्र आदि बता देते हैं जिनका प्रबन्ध यजमान व यज्ञ करवाने वाले महानुभाव को करना होता है। पुरोहित की दक्षिणा भी यज्ञ का मुख्य अंग होती है। आजकल पुरोहित का जीवन उसे प्राप्त होने वाली दक्षिणा पर ही निर्भर होता है। यदि उन्हें उचित मात्रा में दक्षिणा न दी जाये तो उनका जीवन निर्वाह होना कठिन होता है। अधिकांश लोग उन्हें कम दक्षिणा देते हैं व देना चाहते हैं जिससे उनका जीवन साधारण कोटि का होता है। दूसरों को देखकर उनमें साधरण मनुष्यों की भांति लोभ की प्रवृत्ति भी उत्पन्न होती है। आजकल निर्लोभी पुरोहित जी का मिलना हमें दुलर्भ ही लगता है। पुरोहित जी जानते हैं कि कौन यजमान किस आर्थिक स्थिति का है। विवाह पर तो आजकल बहुत अधिक दक्षिणा ली जाती है। अनेक स्थानों पर पुरोहित व कन्या व वर के पिता को परस्पर लड़ते झगड़ते भी देखा है। उसमें पुरोहित पुरोहित पक्ष की कुछ बातें उचित भी होती हैं। एक रोचक घटना याद आ गई। सन् 1976 में हम अपने एक सहपाठी मित्र श्री महेन्द्र सिंह के विवाह संस्कार में बिजनौर के वुडगरा ग्राम में सम्मिलित हुए थे। हमारे आर्य विद्वान श्री रूपचन्द्र दीपक, लखनऊ इसी गांव के हैं। संस्कार सम्पन्न होने पर वर पक्ष के पिता ने पण्डित जी को दक्षिणा दी तो पण्डित जी ने कुछ और धनराशि देने को कहा। इस पर वर के पिता बोले कि दक्षिणा की राशि किस शास्त्र में लिखी है, तो पण्डित जी ने विनम्रता से उत्तर दिया कि आपने जो दहेज की मांग की और नगद धन मेरी उपस्थिति में लिया, वह किस शास्त्र के वचनों के आधार पर लिया? यह सुन कर वर के पिता को कुछ अधिक धन पण्डित जी को देना पड़ा। एक अन्य घटना भी याद आ रही है। हमारे देहरादून के एक आर्यमित्र के पुत्र का विवाह संस्कार हमारे एक परिचित आर्य पुरोहित जी पं. वेदश्रवा ने रात्रि समय में कराया। संस्कार के बाद उनको दक्षिणा दी गई जो उन्हें कम लगी। उन्होंने हमसे प्रश्न किया कि इन महाशय ने आरकेस्ट्रा और बैण्ड बाजें वालों को जो हजारों रूपये की दक्षिणा दी उन्होंने क्या विवाह कराया? फिर मुझे उनसे बहुत कम दक्षिणा क्यों दी जबकि विवाह तो मैंने ही कराया है। हमने उनकी बात का समर्थन तो किया परन्तु हम कुछ करने व कहने में असमर्थ थे। हमने देखा कि देर रात्रि वर और वधू के पिता भोजन कर रहे थे। पुरोहित जी उनके पास गये। अपने तर्क दिये, वर के पिता ने अपना बटुआ निकाला और कुछ धन पुरोहित जी को दिया। पुरोहित जी ने तब अधिक कुछ नहीं कहा, जो दिया ले लिया और चले गये। ऐसी घटनायें हमारे पुरोहितों के जीवन में घटती रहती हैं। ऐसे भी संस्मरण है कि हमारे कहने पर एक पुरोहित जी ने हमारे किसी परिचित मित्र के माता-पिता के देहान्त के अवसर पर प्रति दिन 10 किमी. दूर उनके निवास पर जाकर कई दिनों तक यज्ञ कराया। अन्तिम दिन यजमान महोदय द्वारा दक्षिणा उन्हें दी गई। हमने देखा की दक्षिणा कम है तो हमने बाद में अपनी ओर से कुछ धनराशि पण्डित जी को प्रदान की जबकि पहले व बाद में पण्डित जी ने हमें कोई शिकायत नहीं की थी। अपने मित्र को तो हम कुछ कह नहीं सकते थे। ऐसे कुछ उदाहरण हमारे जीवन में और भी हैं। अस्तु।

अनेक पुरोहित दक्षिणा पहले ही तय करने व कम मिलने पर यजमान को और अधिक देने को कहने को उचित भी ठहराते हैं और अनेक हेतु देते हैं। यह उचित भी हो सकता है परन्तु हर स्थिति में नहीं होता, ऐसा हम अनुभव करते हैं। हमने देखा है कि ऐसे बहुत से लोग होते हैं जो ऋण लेकर अपने कार्य करते हैं। हमने अपने कार्यालय में ही देखा है कि जब भी किसी मित्र परिवार में विवाह आदि होता है तो वह अपने प्राविडेण्ट फण्ड से धन निकालता है। कई लोगों से अपने मित्रों से भी धन लेते देते देखा है। सभी की आर्थिक स्थिति एक समान तो होती नहीं है। उचित मात्रा में दक्षिणा को उचित ही कहा जायेगा परन्तु जब कुछ घण्टों के यज्ञ कराने के कई कई हजार रूपये और अनेक प्रकार का सामान वह लेते व मांगते हैं तो कई बार यजमान आतिथेय को बुरा भी लगता है। हमने एक स्मृतिशेष आर्य भजनोपदेशक को देहरादून के एक पुरोहित सम्मेलन में बोलते हुए सुना है जिसमें उन्होंने पुरोहितों की दशा का चित्रण किया था। इस सम्मेलन में डा. रघुवीर वेदालंकार जी ने कहा था कि पुरोहित के पास उतना धन होना चाहिये कि जितना यजमान के पास है। विद्वान व अपरिग्रही पुरोहितों के बारे में तो यह बात उचित हो सकती है परन्तु इससे यह सम्भावना बनती है कि यदि दक्षिणा अधिक होगी तो पुरोहितों में आलस्य व प्रमाद आ सकते हैं और वर्तमान में समाज में जो यज्ञ एवं संस्कार आदि थोड़े बहुत होते हैं वह और कम हो जायेंगे। वैदिक धर्म का प्रचार भी बाधित हो सकता है।

 प्राचीन काल में हमारे राज परिवार के लोग ऋषियों, विद्वानों व आचार्यों को गौ व धन आदि के रूप में भारी भरकम दक्षिणा दिया करते थे, ऐसी आम धारणा है। मुण्डकोपनिषद में भी गोदान के बारे में कहा गया है। राजा जनक एवं ऋषि याज्ञवल्क्य जी का प्रसंग, जिसमें स्वर्णमंडित सींगो वाली बहुत सारी गाय ऋषि को दिये जाने का वर्णन आता है, भी पढ़ने को मिलता है। शिवाजी के राज्याभिषेक में भी भारी व्यय किया गया था। इसका बहुत बड़ा भाग भी दक्षिणा में व्यय हुआ होगा। महर्षि दयानन्द के पूर्वज भी उत्तर भारत से जाकर गुजरात में बसे थे। उनको भी वहां राजपरिवार से बड़ी मात्रा में भूमि व प्रचुर द्रव्य आदि दिये गये थे। अतः योग्य पुरोहित को जितनी भी दक्षिणा दी जाये वह उचित है परन्तु वह उसका सदुपयोग धर्म संवर्धन कार्यों में करें, दुरुपयोग न करे। इसके विपरीत आजकल आर्यसमाज के पुरोहित अपनी इच्छानुसार दक्षिणा मांगते हैं। इससे बहुत से लोग तो घर में पुरोहितों से यज्ञ कराने में डरते हैं। दक्षिणा लेते हुए एक ओर जहां पुरोहित जी को अपने पौरोहित्य कर्म के समय सहित यजमान की आर्थिक व्यवस्था का ध्यान होना चाहिये वहीं यजमान को भी देश काल परिस्थिति के अनुसार उचित दक्षिणा पुरोहित जी को देनी चाहिये। हमें भी जीवन में अपने कुछ परिचित आर्य व इतर मित्रों के यहां आपसी सम्बन्धों के कारण यज्ञ कराने के अनेक अवसर मिले हैं। हमने प्रायः सभी अवसरों पर दक्षिणा न देने का विनम्र अनुरोध किया है तथापि हमें आग्रह पूर्वक दक्षिणा मिलती रही है। पुरोहित जी दक्षिणा कुछ अधिक होती है। अभी कुछ ही दिन पहले ही हमें एक ऋषिभक्त आर्य विद्वान के साधन सम्पन्न पुत्र से पुरोहितों की दक्षिणा के बारे में चर्चा करने का अवसर मिला। उन्होंने बताया कि उन्होंने जब पहली बार एक आर्य पुरोहित को किसी यज्ञ के लिए बुलाया तो उन्होंने हमें कार्य सम्पादन से पहले ही दक्षिणा की राशि सूचित कर दी। हमें यह बुरा लगा। उन्होंने बताया कि उन्होंने उससे कहीं अधिक दक्षिणा देने का विचार कर रखा था। वही पुरोहित आज भी उनके यहां यज्ञ कराते हैं और अब वह बात समाप्त हो चुकी है। यज्ञ से पूर्व दक्षिणा तय करने की स्मृति का वह शूल उन्हें आज भी कष्ट देता है, इसी कारण उन्होंने वह बात हमसे साझा की है। यह पुरोहित जी हमारे अति प्रिय मित्रों में है। हम दोनों एक दूसरे का परस्पर सम्मान करते हैं।

 अंग्रेजी पत्रिका वैदिक थाट्स के सम्पादक महोदय से हमारा काफी समय तक सम्पर्क रहा है। जब भी हमने यज्ञों पर कोई लेख लिखा तो उन महोदय ने यज्ञ के महत्व पर अपनी असहमति जताई। उनका आशय यह लगा कि हमारे गुरुकुलों के जो स्नातक पुरोहित बन जाते हैं वह यजमानों से मनमानी दक्षिणा लेते हैं जिससे आर्यसमाज के प्रचार के स्थान पर अप्रचार अधिक होता है। हमने उन्हें समझाने की कोशिश की कि यज्ञ और दक्षिणा दो अलग अलग चीजें हैं। इन्हें जोड़िये मत। जो व्यक्ति वा पुरोहित यजमान की भावनाओं को ठेस व दुःख पहुंचा कर दान व दक्षिणा लेता है, वह गलत हो सकता हैे परन्तु यज्ञ का यथार्थ स्वरूप मनुष्य के लिए बहुत कल्याणकारी है जिसका लाभ प्रत्यक्ष रूप से इस जन्म में तो होता ही है, भावी जन्मों में भी मिलता है। इसी विषय को लेकर हमारे उनसे विचार नहीं मिले और हमारा सम्बन्ध विच्छेद हो गया। आज भी वह अपनी पत्रिका की प्रति इमेल पर भेज देते हैं। वह है ंतो ऋषि को मानने वाले परन्तु कुछ गुरुकुलीय पुरोहितों के आचरणों के कारण वह यज्ञ के ही आलोचक बन गये हैं। हमारे पुरोहितों व विद्वानों को इस पर ध्यान देना चाहिये।

 हमें यह लेख इस कारण लिखना पड़ा कि एक ऋषिभक्त परिवार के एक महीनय व्यक्ति ने एक आर्य पुरोहित द्वारा यज्ञ वा संस्कार से पूर्व अपनी दक्षिणा निर्धारित करने की पूर्वानुभूत दुःख वा टीस से हमें अ वगत कराया। हमें आर्यनेता कीर्तिशेष श्री देवरत्न आर्य के यशस्वी पिता आचार्य भ्रदसेन जी के जीवन का एक प्रसंग भी याद आ रहा है। वह एकबार एक ऐसी माता की पुत्री के घर विवाह संस्कार कराने पहुंचे जो अति निर्धनता का जीवन व्यतीत करती थी। उस माता ने उन्हें बिना मांगे दक्षिणा दी जो उस समय के हिसाब से पर्याप्त अधिक थी। उन्होंने उस दक्षिणा की धनराशि को उनकी विवाहित पुत्री को भेंट में दे दिया और अपनी ओर से भी कुछ सहयोग राशि दी। इसका वर्णन प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु जी ने उनके जीवन चरित्र में किया है। काश हमारे सभी पुरोहित आचार्य भद्रसेन जी के जीवन से शिक्षा लें। पुरोहित कर्म अन्य व्यवसायों जैसा व्यवसाय नहीं है। यह धर्म कार्य है। इसमें त्यागी व तपस्वी तथा निर्लोभी लोगों को ही पुरोहित होना चाहिये। तप व अभाव तो उन्हें झेलना पड़ ही सकता है। महत्वांकाक्षी लोगों को पुरोहित जैसे महीन एवं पवित्र कार्य को करने वाला नहीं बनना चाहिये। यज्ञ कराने वाला तो दक्षिणा देगा ही, वह कम व अधिक हो सकती हैं। यदि पुरोहित जी उसमें सन्तोष कर लेते हैं तो उत्तम है। यदि कहीं से दक्षिणा कम मिलती तो तो परमात्मा, पुरोहित की पात्रता के अनुसार, कहीं से अधिक भी दिला सकते हंै। इसलिए हमारे सभी पुरोहितों का व्यवहार धर्म के अनुरूप हो जिससे किसी की भावनाओं को न तो ठेस लीगे और न आर्यसमाज की हानि हो। पुरोहित को यह भी ध्यान रखना चाहिये कि उनका कार्य बहुत सम्माननीय कार्य है। अधिक दक्षिणा मांगने से उस पुरोहित का सम्मान घटना है। हमारे विद्वान व सभायें भी विचार कर इस विषय में कुछ निर्देश पुरोहित वर्ग को दे सकती हैं। अन्य विद्वान भी इस विषय में लेख लिखें जिससे पाठकों को जानकारी मिले और एक राय बन सके। पुरोहित भी लेख लिखकर अपना पक्ष प्रस्तुत कर सकते हैं। ओ३म् शम्।

 **-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**